लक्ष्य 1: भीषण भूख और ग़रीबी उन्मूलन

लक्ष्य 1 : 1990 और 2015 के बीच रोज़ाना एक डॉलर से भी कम पर गुज़ारा करने वाले लोगों का अनुपात आधेआध आंका गया है.

मौजूदा दौर में भारत में 26 करोड़ लोग (जो कुल आबादी का 30 प्रतिशत हैं) आधिकारित तौर पर ग़रीबी रेखा से नीचे गुज़र-बसर कर रहे हैं. हर चार में से तीन हिन्दुस्तानी 20 रुपए रोज़ से भी कम पर गुज़ार कर रहे हैं. पाँच राज्यों की आधी आबादी भयंकर ग़रीबी में जीवन व्यतीत कर रही है. (सामाजिक विकास रिपोर्ट, 2006)

अनुसूचित जाति की एक तिहाई से ज़्यादा आबादी और अनुसूचित जनजाति की लगभग आधी आाबदी आधिकारित ग़रीबी रेखा (12 रुपए प्रति दिन) से नीचे जीवन निर्वाह कर रही है. मौजूदा समय में देश के निजी उद्यमों में से मात्र 10 प्रतिशत पर अनुसूचित जाति का स्वामित्व है जबकि अनुसूचित जनजाति के हिस्से तो 6 प्रतिशत से भी कम है.

लक्ष्य 2: 1990 से 2015 तक भूख से बेहाल लोगों का अनुपात, आधेआध

भारत में 20 करोड़ से भी ज़्यादा लोग कुपोषण के शिकार हैं (राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण). दुनिया के कुपोषित बच्चों की आधी आबादी हिन्दुस्तान में रहती है, तथा यहाँ के कुपोषित बच्चों का नियमित स्तर उप-सहारीय अफ़्रीका से ज़्यादा है. ख़ास तौर से, अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति वर्ग के बच्चे अन्य बच्चों के मुक़ाबले कुपोषण से ज़्यादा पीड़ित हैं. सूक्ष्म-पोषाहार के मामले में भयानक जेंडर असंतुलन है: देश में वयस्क शादीशुदा महिलाओं की एक तिहाई आबादी का वज़न ज़रूरत से भी कम है और सारी-की-सारी रक्तक्षीणता की शिकार हैं. दुख:द हक़ीक़त यह है कि सबसे ग़रीब तबक़े में प्रति व्यक्ति कैलोरी की खपत में कमी आयी है.

देश की लगभग 70 प्रतिशत आबादी देहातों में रहती है और उसकी आजीविका का प्राथमिक ज़रिया कृषि है. ताज़े बजट में वर्ष 2007-08 के लिए जो घोषणा की गयी है उसके मुताबिक़ कृषि-विकास की दर मत्र 2.6 प्रतिशत है, जो बेहद निराशाजनक है. 2002 से अब तक प्रतिदिन लगभग 312 किसान आत्महत्या कर रहे हैं, मोटे तौर पर कहें तो हर 30 मिनट में एक आत्महत्या (राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो).

मौजूदा नीति

दसवीं और ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना	7 करोड़ लोगों के लिए रोज़गार के अवसरों का सृजन.
राष्ट्रीय ग्रामीण रोज़गार गारंटी परियोजना	न्यूनतम मज़दूरी पर प्रत्येक परिवार को 100 दिनों का रोज़गार. इस योजना के अंतर्गत पिछले साल तक केवल 330 ज़िले शामिल थे जिसे बढ़ा कर 2008 में 596 कर दिया गया है.
सार्वजनिक वितरण प्रणाली	कोशिश है कि न्यूनतम आवश्यक खाद्यान्न हर घर तक पंहुचे.
अंतोदय अन्न योजना और संपूर्ण ग्रामीण रोज़गार योजना	भीषण ग़रीबी झेल रहे 2.5 करोड़ परिवारों को चिह्नित करके उनको बहुत ही कम क़ीमत पर खाद्यान्न उपलब्ध कराया जा रहा है. राष्ट्रीय ग्रामीण योजना से बाहर रह गए जिलों में संपूर्ण ग्रामीण रोज़गार योजना के तहत काम के बदले अनाज और नकदी दोनों उपलब्ध कराए जा रहे हैं.

योजना आयोग के 2005 के एक अध्ययन के मुताबिक़ सार्वजनिक वितरण प्रणाली का लाभ ग़रीबी रेखा से नीचे के लगभग 57 प्रतिशत परिवारों को ही मिल पा रहा है. संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन (यूपीए) के इन रिपोर्टों के मुताबिक़ अनुमानत: 36 प्रतिशत खाद्य उत्पाद काला-बाज़ार में पहुंचा दिए जाते हैं, और कुछ राज्यों में तो इस 'रिसाव' का अनुमान 80 प्रतिशत के आसपास बैठता है. भारत सरकार के खाद्य और सार्वजनिक वितरण विभाग के एक रिपोर्ट (2005) के मुताबिक़ इस अव्यवस्था के तीन महत्त्वपूर्ण कारक है: खाद्यान्नों को इधर-उधर घुमा दिया जाता है या फिर उसकी चोरी हो जाती है; ग़रीबी रेखा से नीचे के परिवारों को चिह्नित नहीं किया गया है, तथा ग़रीबी रेखा से नीचे के परिवारों के मद के खाद्यान्न ग़रीबी रेखा से ऊपर के परिवारों तक पहुंचा दिए जाते हैं. एक अनुमान के मुताबिक़ आधे राशन कार्ड जाली हैं, मसलन अयोग्य या ग़ैरमौजूद लोग कार्डधारी बने बैठे हैं.

भारत के कंट्रोलर और ऑडिटर जनरल के एक ड्राफ़्ट रिपोर्ट ने यह खुलासा किया है कि कुल पंजीकृत परिवारों का औसतन केवल 3.2 प्रतिशत ही राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना के तहत 100 दिनों के रोज़गार का लाभ उठा सकता है, वो भी महज़ 40 दिनों के औसत रोज़गार के साथ. बहुतेरे रिपोर्ट यह बताते हैं कि काम समाप्त हो जाने के बाद पूरी मज़दूरी नहीं दी गयी या दी गयी तो देरी से. राष्ट्रीय ग्रामीण रोज़गार गारंटी परियोजना आरंभ करने से पहले 2005-06 में भारत सरकार ने 18,046 करोड़ रुपए दिहाड़ी वाले रोज़गार पर ख़र्च किया. राष्ट्रीय ग्रामीण रोज़गार गारंटी परियोजना के तहत 2006-07 में कुल 16,117 करोड़ ख़र्च किए गए जबकि मौजूदा बजट में इस परियोजना के लिए केवल 16,000 करोड़ रुपए की घोषणा की गयी है. यानी हक़ीक़त में ये है कि रोज़गार के मद में निवेश घटा है.

नीति अनुशंसा

कृषि में निवेश बढ़ाया जाय:

किसानों की बढ़ती आत्महत्या का कारण केवल क़र्ज़ नहीं है. किसानों की आजीविका के लिए नियमित और सुनिश्चित मासिक आय का बड़ा महत्त्व होता है. इसके लिए सहायी सुविधाओं में बढ़ोतरी की जाए, विक्रय में सहयोग के साथ-साथ आधुनिक तौर-तरीक़ों के बारे में सटीक और विश्वसनीय जानकारी दी जाए तथा छोटे-छोटे भूखंडों पर होने वाली कृषि और बदलती परिस्थितियों के मद्देनज़र सरकारी निवेश बढ़ाया जाए.

सार्वजनिक वितरण प्रणाली को और अधिकज़वाबदेह बनाया जाए:

खाद्य और सार्वजनिक वितरण विभाग के अंतर्गत 2007 में केन्द्रीय निगरानी समिति की एक रिपोर्ट में कहा गया है कि निरंकुश भ्रष्टाचार पर अंकुश लगाने का सबसे बढ़िया उपाय ये है कि सरकारी-कर्मियों व उपभोक्ताओं का आमना-सामना कम से कम हो तथा कंप्यूटरीकृत प्रणाली लागू की जाए. सरकार को चाहिए कि सार्वजनिक वितरण प्रणाली में व्याप्त भ्रष्टाचार को समाप्त करने के लिए वो 'नाबर्दाश्तगी' अभियान आरंभ करे और सख्ती से उसका पालन करे, साथ ही धारा 15ए को रद्द करे ताकि काम-काज़ में धांधली करने पर सरकारी कर्मियों को उपयुक्त सज़ा दी जा सके. असंगठित क्षेत्रों, मसलन बेघरों, प्रवासियों और विधवाओं, इत्यादि को भी सरकार वरियता दे जो राशन कार्ड के लिए ज़रूरी दस्तावेज़ जुटाने में अक्षम हैं. मौक़ा-ए-मुआयना के ज़रिए अविलंब पात्रता सुनिश्चित की जा सकती है, साथ ही भटकते-फिरते लोगों के बीच 'घुमंतू राशन कार्ड' वितरित किए जा सकते हैं.

राष्ट्रीय ग्रामीण रोज़गार गारंटी परियोजना मिशन को संकेन्द्रित किया जाए:

विभागीय ढर्रे को छोड़कर मिशनरी रुख अख्तियार करना बेहद ज़रूरी है. केंद्र राज्य सरकारों और पंचायतों के बीच बेहतर रणनीतिक समन्वय हो, विभिन्न साझेदारों के बीच निधारित कार्यों व लक्ष्यों के बारे में आदान-प्रदान किया जाए तथा सरकारी-कर्मियों को यह स्पष्ट कर दिया जाए कि अंतत: क्या, कैसे और कितना होना चाहिए और उनकी जिम्मेदारी और ज़वाबदेही क्या है. इस बात के लिए पंचायतों की मदद की जाए कि वो स्थानीय समुदायों की भागीदारी से एक विस्तृत रणनीति बना सकें, जिससे आने वाले वर्षों में एक दीर्घकालीन योजना के तहत सुसंगत ढंग से काम हो सके. मज़दूरी का भुगतान समय से किया जाए और मज़दूरों की शिकायतों के निबटारे के लिए राज्यों में ठोस तौर-तरीक़े इजाद किए जाएं, राष्ट्रीय ग्रामीण रोज़गार गारंटी कामगार संगठन गठित किए जाएं ताकि कामगारों के अधिकारों की रक्षा हो सके. समुदायों में बच्चों की देखभाल और आवाजाही के लिए सवारी की व्यवस्था की जाए.

एकसमान भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए साख प्रणाली और वित्तीय मदद की व्यवस्था विकसित की जाए, स्वयं सहायता समूहों का गठन किया जाए तथा अनुसूचित जाति/जनजाति एवं अन्य पिछड़े वर्गों के लोगों के लिए क़र्ज़ की व्यवस्था की जाए. समाज के उपेक्षित तबक़ों के लिए कम दर पर ऋण व उद्यम आधारित पढ़ाई/प्रशिक्षण की व्यवस्था के अतिरिक्त उनके लिए कौशल विकास के अवसरों का भी सृजन किया जाए.

लक्ष्य 2: सबके लिए प्राथमिक शिक्षा

लक्ष्य: सुनिश्चित करें कि 2015 तक लड़का हो या लड़की, चाहें देश के जिस किसी भी भाग में रहते हों, सबको संपूर्ण प्राथमिक शिक्षा मिले.

युनेस्को के एक रिपोर्ट के मुताबिक़ आधिकारिक तौर पर दुनिया के निरक्षरों की सबसे बड़ी जमात भारत में रहती है. सांख्यिकी और कार्यक्रम क्रियान्वयन मंत्रालय के एक रिपोर्ट के मुताबिक 2005 में प्राथमिक शिक्षा में 94 प्रतिशत दाखिले हुए. पर इसके बावजूद लगभग 95 लाख बच्चे स्कूल से बाहर ही रहे. पिछले 5 सालों में स्कूल छोड़ने की दरों में लगभग 50 प्रतिशत की वृद्धि हुई है.

अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों में पहली से दसवीं कक्षा के बीच स्कूल छोड़ने की दर 72 प्रतिशत के आसपास है. इस पूरे उपमहाद्वीप में 4-6 साल की उम्र के मानसिक और शारीरिक विक्लांगता के शिकार भारत के 3.6 करोड़ बच्चों का 90 प्रतिशत हिस्सा स्कूल से बाहर है.

नमूने के तौर पर विश्व बैंक ने जब कुछ सरकारी स्कूलों का औचक दौरा किया तो आधे से ज़्यादा शिक्षकों को ग़ैरहाजिर पाया, लगभग आधे ही पढ़ाते पाए गए. तक़रीबन एक तिहाई अध्यापक उच्च माध्यमिक पास भी नहीं है. 2005 में केवल 28 प्रतिशत सरकारी स्कूलों में बिजली थी, हर पांच में से एक स्कूल के पास अपना भवन नहीं था, दस प्रतिशत स्कूल ब्लैकबोर्ड विहीन थे, 40 प्रतिशत स्कूलों में लड़कियों के लिए अलग शौचालय की व्यवस्था नहीं थी और लगभग आधे स्कूल पुस्तकालय के बग़ैर ही आबाद थे.

मौजूदा नीति

न्यूनतम साझा कार्यक्रम	शिक्षा पर सरकारी ख़र्चे को बढ़ाकर सकल घरेलू उत्पाद के कम से कम 6 प्रतिशत तक करना, जिमसें से कम से कम आधे का प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा पर निवेश. सबको बेहतर प्राथमिक शिक्षा मिले-इस प्रतिबद्धता को पूरा करने के लिए वित्तीय व्यवस्था के मद्देनज़ार सभी केन्द्रीय करों में एक उपकर की शुरुआत.
दोपहर का भोजन	सभी सरकारी/वित्त पोषी स्कूलों में पहली से पांचवीं तक के बच्चों के लिए दोपहर के भोजन की व्यवस्था.
सर्व शिक्षा कार्यक्रम	सामुदायिक नेतृत्व वाली स्कूल प्रणाली के ज़रिए सबके लिए प्राथमिक शिक्षा के लक्ष्य को हासिल करना. इससे 2005 तक स्कूल से बाहर रह जाने वाले बच्चों की संख्या में 130 लाख की कमी आई है, साथ ही 2001 के मुकाबले 2005 में निरक्षरों की संख्या में 250 लाख की कमी आयी है.

संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन की सरकार अपने वायदे के मुताबिक़ अब तक 'शिक्षा का अधिकार' अधिनियम संसद में पेश नहीं कर पायी है. इस बिल के ज़रिए संविधान के अनुरूप 14 साल तक के सभी बच्चों के लिए मुफ़्त और ज़रूरी एक समान शिक्षा का सपना साकार होना है. इसमें स्कूलों में दाखिल और स्कूल न पहुंच पाने वाले बच्चों के प्रति सरकार, स्थानीय प्रशासन और अध्यापकों की जिम्मेदारी तथा स्कूलों के स्तर, उनकी निगरानी व स्वीकृति-प्रक्रिया व संबंधित तौर-तरीक़े तय कर दिए गए हैं. इस राष्ट्रीय अधिनियम के बजाय केन्द्र सरकार ने सभी राज्य सरकारों के पास एक 'मॉडल बिल' (2006) भेजा है और उनसे ये कहा है कि इस बिल की रोशनी में वे अपने-अपने राज्यों के मौजूदा शैक्षिक क़ानूनों में समुचित बदलाव करें, जबकि यह मॉडल बिल न तो संसद द्वारा पारित किया गया है और न ही **सीएबीई** ने इसकी सिफ़ारिश की है. बिना किसी राष्ट्रीय नियमन, क़ानूनी अमलीकरण और व्यापक दृष्टि के देशव्यापी स्तर पर एकसमान शिक्षा प्रदान करने की कोई भी प्रक्रिया कठिन और असंगत होगी - ख़ासकर इसलिए भी कि सर्व शिक्षा अभियान में राज्यों के स्तर पर सरकार निवेश घटाना चाहती है.

शिक्षा सुरक्षा परियोजना (इजीएस) देश भर में वैकल्पिक और निजी शिक्षा संस्थानों का गठन कर रहा है. चिंताजनक बात यह है कि यह कम

फ़ायदेमंद है. आम तौर पर इजीएस के अंतर्गत वैकल्पिक स्कूलों में पढ़ने वाली लड़कियों और उपक्षित तबक़ों के बच्चों के लिए यह और ज़्यादा असमानता पैदा करने वाली व्यवस्था है. इसके चलते शिक्षा के दूसरे चरण में ज़रूरतमंदों के लिए सरकारी सहायता की संभावनाएं भी क्षीण होंगी. इस दिशा में सर्व शिक्षा अभियान के तहत वैकल्पिक विद्यालयों/इसीए केन्द्रों और अर्द्धशैक्षिक कर्मियों का रंग-ढंग बड़ा विध्वंसक है. पुनर्समावेशीकरण की रणनीतियों के अभाव में शिक्षा पर सरकारी ख़र्च तो कम हो ही रहा है, साथ ही पहले से ही लचर सरकारी शिक्षा प्रणाली और भी ज़्यादा लचरती जा रही है.

नीति अनुशंसा

शिक्षा पर सरकारी ख़र्च में वृद्धि:

ढांचागत सुविधाओं में सुधार के लिए सरकार को दीर्घकालीन प्रतिबद्धता दिखानी होगी, जिसके लिए सकल घरेलू उत्पाद के न्यूनतम 6 प्रतिशत के निवेश की ज़रूरत पड़ेगी और वायदे के मुताबिक 2009 तक इसे पूरा करना पड़ेगा.

शिक्षा को क़ानूनन अधिकार बनाएं:

राष्ट्रीय न्यूनतम साक्षा कार्यक्रमों में जिस तरह सुनिश्चित किया गया है उसके अनुरूप शिक्षा के अधिकार अधिनियम को सर्वोच्च प्राथमिकता के साथ पारित किया जाए, जिसमें शिक्षा के एक निश्चित स्तर की गारंटी हो और उसे क़ानूनी सुरक्षा उपलब्ध हो ताकि इसकी गुणवत्ता बनी रहे और सब तक इसकी पहुंच हो. शिक्षा के अधिकार अधिनियम को प्रवर्तनीय बनाया जाए और अगर यह प्रणाली किसी भी भारतीय बच्चे को शिक्षा प्रदान करने में असफल होती है तो उसके लिए केन्द्र सरकार को जिम्मेदार ठहराया जाए. इस अधिनियम के क्रियान्वयन की निगरानी के लिए एक स्वतंत्र पेशेवर निकाय, 'केन्द्रीय शिक्षा आयोग' का गठन किया जाए. इस मूलभूत मानवाधिकार की नज़रअंदाज़गी के लिए कोष की कमी का बहाना नहीं बनाया जा सकता है.

विक्लांग बच्चों की शिक्षा को वरीयता दी जाए:

विक्लांग बच्चों को ध्यान में रखते हुए बिल में सुधार किया जाना चाहिए, जिन बच्चों को सुनने में दिक़्क़त होती है उनको औपचारिक स्कूली शिक्षा के ढांचे में शामिल करने के लिए विस्तृत उपाय किए जाएं. ख़ास तौर से विक्लांग बच्चों की शिक्षा पर एक अधिकार आधारित नीति की ज़रूरत है.

दूसरे दर्जे की शिक्षा नहीं चलेगी

'अर्द्ध' स्कूलों और शिक्षकों में आधिकारिक तौर पर सुधार किया जाए और एक निश्चित समयावधि तक उन्हें नियमित किया जाए. साथ ही मौजूदा इजीएस/वैकल्पिक स्कूलों में पढ़ रहे बच्चों को मुख्यधारा की शिक्षा में शामिल करने के लिए रणनीतियां बनायी जाएं.

शिक्षा को प्रासंगिक व रोचक बनाया जाए:

शिक्षा को प्रासंगिक, रोचक और रोज़गारपरक होना चाहिए: इससे कौशल के विकास पर ज़ोर पड़ेगा और बच्चों के स्कूल में टिकने की दर भी बढ़ेगी. प्राथमिकर शिक्षा से लेकर उच्च प्राथमिक, माध्यमिक, उच्च माध्यमिक और उसके बाद उच्च शिक्षा और तकनीकी/पेशेवर शिक्षा तक: एक तारतम्यता होनी चाहिए और क़ायदे से उसका विकास होना चाहिए. आठवीं कक्षा के बाद औपचारिक पढ़ाई छोड़ने वालों के लिए संभावनाएं व अवसर होने चाहिएं ताकि कौशल और आजीविका के रास्ते खुल सकें. इसलिए शिक्षा के अधिकार बिल के साथ-साथ समग्रता में एक प्रभावी रणनीति भी बनायी जानी चाहिए जिनमें पाठ्यक्रम-परिवर्तन, कक्षा के वातावरण, शिक्षकों के प्रशिक्षण एवं उनकी प्रेरणा, सामुदायिक दृष्टि व उसके तालमेल, पठन-पाठन के नतीजों का आंकलन तथा उच्चतर शिक्षा और रोज़गार के सथ इसके प्रभावी जुड़ाव पर विचार हो.

समुदाय की भागीदारी सुनिश्चित हो:

समुदायों की सहभागिता बढ़ा कर विभिन्न तबक़ों के बच्चों के स्कूल न जा पाने और जल्दी ही औपचारिक शिक्षा से उनके बाहर हो जाने की समस्या का निदान हो सकता है. शोधों से यह पता चलता है कि जहां-जहां सक्रिय समितियों ने स्कूलों की निगरानी की है वहां-वहां उपस्थिति की दर ज़्यादा रही है, और हक़दारी के मामलों में समुदायों की जागरूकता भी बढ़ी है. प्रदर्शन-पट्टों के माध्यम से सरकारी परियोजनाओं व उनके लाभ, स्कूलों की प्रगति और उनकी क्षमता के बारे में मूलभूत जानकारियाँ प्रदान करके सामुदायिक सहभागिता बढ़ाई जा सकती है और साथ ही पारदर्शिता भी. बच्चों को भी इस बात के लिए प्रेरित किया जाए कि वे अपने स्कूलों और पढ़ाई-लिखाई के बारे में निर्णय लें.

लक्ष्य 3 जेंडर बराबरी को प्रोत्साहन व महिला सशक्तीकरण

लक्ष्य 1: प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा के स्तर पर 2005 तक, तथा सभी स्तरों पर 2015 तक जेंडर विषमता समाप्त की समाप्ति.

अर्थव्यवस्था में महिलाओं की भागीदारी वाली विश्व आर्थिक मंच की सूची में भारत निचले दस देशों में शामिल है.

जनप्रतिनिधियों, वरिष्ठ अधिकारियों और प्रबंधकों में महिलाओं का प्रतिशत महज़ 3 है.

संसद में महिलाओं का प्रतिशत केवल 8 है.

विश्व आर्थिक मंच की सूची में स्वास्थ्य और उत्तरजीविता (सर्वाइवल) सूचकों की दृष्टि से भारत नीचे से तीसरे स्थान पर है, केवल अज़रबैजान और आरमेनिया ही इसके पीछे है.

1901 में बालिकाओं की संख्या में जहां 30 लाख की कमी थी वहीं 2001 में यह बढ़कर 360 लाख हो गयी. आज छह साल के हर एक हज़ार लड़कों के मुक़ाबले लड़कियों की संख्या मात्र 927 है. मोटे तौर पर कन्या भ्रूण हत्या और कन्या शिशु हत्या को इस प्रतिकूल लिंगानुपात का कारण माना जाता है, पर हक़ीक़त ये है कि लंबे समय तक महिलाओं के स्वास्थ्य और कल्याण को अनदेखा करते रहना इसकी एक महत्त्वपूर्ण वजह है.

महिलाओं के खिलाफ़ हिंसा लगातार बढ़ रही है. बलात्कार तो भारत में तेज़ी से बढ़ता अपराध बन गया है. 1971 से लेकर अब तक बलात्कारों की संख्या में लगभग 700 प्रतिशत का इज़ाफ़ा हुआ है (राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो).

लगभग आधी लड़कियां क़ानूनन तय उम्र: 18 वर्ष से पहले ब्याह दी जाती हैं (राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण-3). ग्रामीण क्षेत्रों में दस प्रतिशत की दर से इसमें वृद्धि हो रही है.

मौजूदा नीति

दसवीं व ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना	साक्षरता और मज़दूरी की दरों में व्याप्त जेंडर असंतुलन को 2007 तक 50 प्रतिशत घटना, और ग्यारहवीं योजना अवधि तक साक्षरता दर में असंतुलन को 10 प्रतिशत और घटना. महिलाओं को आवश्यकता के अनुरूप प्रशिक्षण की व्यवस्था और राजनीतिक निर्णय-प्रक्रिया में महिलाओं की भागीदारी पर ज़ोर.
न्यूनतम साक्षा कार्यकम	इसके तहत विधान सभाओं और लोक सभा में महिलाओं के लिए आधी सीटें आरक्षित करने का प्रावधान, पंचायतों को दिए जाने वाले पैसों का एक तिहाई हिस्सा महिलाओं और बच्चों के लिए निर्धारित. घरेलू हिंसा और जेंडर आधारत भेदभाव पर क़ानून, देश भर में माइक्रोफिनांस परियोजना का व्यापकीकरण तथा स्कूलों में बालिकाओं के लिए विशेष प्रावधान.
सर्व शिक्षा अभियान	जेंडर संवेदनशीता के लिए 2 लाख अध्यापकों का प्रशिक्षण

मई 2004 में हुए आम चुनाव में लोकसभा के लिए चुने गए 539 सदस्यों में से केवल 44 महिलाएँ निर्वाचित हुईं. संसद में जेंडर बराबरी सुनिश्चित करने के ख़्याल से महिलाओं के लिए 33 प्रतिशत आरक्षण वाले बिल की रूपरेखा तैयार की गयी. आखिरकर 7 मई 2008 को राज्य सभा में यह बिल पेश किया गया और अब अगले चरण में मानसून सत्र के दौरान स्थायी समिति में इस पर चर्चा होगी.

2004 में महत्त्वपूर्ण हिन्दु उत्तराधिकार (सुधार) बिल पारित हुआ. इसके अंतर्गत पैतृक संपत्ति में महिलाओं को उत्तराधिकार का बराबर अधिकार देकर इस क़ानून में महिलाओं के प्रति पहले से व्याप्त भेदभाव को दूर किया गया है. हालांकि ज़्यादातर मामलों में वसीयत की शर्तें स्वाभाविक रूप से बेटे के पक्ष में होती हैं. साथ ही बेटियों को जिस तरह से पारिवारिक संपत्ति में अपना हिस्सा न मांगने के लिए 'राजी किया' जाता है, उसे रोकने के लिए भी प्रावधान की ज़रूरत है. मुस्लिम और जनजातीय महिलाएं भी इस क़ानून के दायरे से बाहर हैं. 2005 में घरेलू हिंसा अधिनियम पारित हुआ. यह क़ानून सज़ा के प्रावधानों से नागरिक अधिकारों की सुरक्षा और

निषेधों की दिशा में एक सकारात्मक दावों की ओर: एक सफ़ल यात्रा की निशानी है. घरेलू हिंसा अधिनियम में हिंसा और वैवाहिक घर से बेदखली के खिलाफ़ तथा वैकल्पिक आवास के लिए एक प्रभावी स्थगन का अधिकार दिया गया है. इसके तहत महिलाएं आर्थिक सुरक्षा का दावा भी पेश कर सकती हैं. पर ग्रामीण इलाक़ों में जहां महिलाओं के लिए क़ानूनी सुविधा/सहायता बेहद सीमित है, इस क़ानून को लागू करना दुरूह प्रतीत होता है.

गर्भधारण तथा प्रसव पूर्व लिंग परीक्षण तकनीकी (पीसी ऐंड पीनएनडीटी) अधिनियम को सशक्त बनाने के लिए सरकार की ओर से क़दम उठाए गए हैं. हालांकि अब तक सरकार ने जेंडर असंतुलन कम करने के लिए कोई लक्ष्य निर्धारित नहीं किया है: 12 साल बाद पहली दोषसिद्धि मार्च 2007 में हुई. कुछ राज्यों में तो संबद्ध समितियों की कोई बैठक भी नहीं हुई है और बहुत से राज्य समुचित प्राधिकरण का गठन तक नहीं कर पाए हैं (युएनएफ़पीए).

बल विवाह निरोधक अधिनियम 2006 बाल विवाहों को मान्यता नहीं देता है. इसके तहत निर्धारित उम्र से कम उम्र वाली पत्नी के लिए पुनर्विवाह तक गुज़ारा-भत्ता का प्रावधान है. हालांकि इस अधिनियम के तहत विवाह तभी अमान्य साबित होगा जब बच्चा या अभिभावक शिकायत दर्ज करेंगे. और ऐसा तभी हो सकेगा जब वे ऐसा करने के लिए तैयार होंगे व उनमें इससे लड़ने के लिए पर्याप्त इच्छाशक्ति होगी. यह अधिनियम बाल विवाह में सहयोग करने वालों, इसके लिए उकसाने वालों, इसको संपन्न कराने वालों और इसमें शामिल होने वालों को आपराधिक बता पाने में भी नाकाम रहा है क्योंकि बाल विवाह निरोधक अधिनियम 2006 में ऐसी गतिविधियों में शामिल होने वाले जनप्रतिनिधियों या अधिकारियों के लिए सज़ा का कोई स्पष्ट जिक्र ही नहीं है.

नीति अनुशंसा

औपचारिक स्कूली शिक्षा को जेंडर के प्रति और ज़्यादा संवेदनशील बनाया जाए:

इसके लिए पाठ्यक्रमों में आवश्यक सुधार किया जाए. ढांचागत सुविधाओं मसलन, शौचालय, परिवहन, इत्यादि में बढोतरी की जाए, अध्यापकों को संवेदनशील बनाया जाए, लड़कियों की शिक्षा पर होने वाले ख़र्चे की निगरानी की जाए और पिछड़े व दूर-दराज़ वाले इलाक़ों में अनुसूचित जाति/जनजाति, मुस्लिम व अन्य पिछड़े वर्ग की लड़कियों पर विशेष फ़ोकस ग्रुप के ज़रिए ध्यान दिया जाए, बालिकाओं की शिक्षा को रोज़गार परक बनाया जाए और इसके लिए उन्हें इस तरह के कौशल व आजीविका आधारित प्रशिक्षण दिए जाएं जिनसे माइक्रोक्रेडिट परियाजनाओं और राष्ट्रीय गामीण रोज़गार गारंटी परियोजना के साथ उसकी तारतम्यता बैठ पाए. जेंडर संवेदी जीवन कौशल और नेतृत्व प्रशिक्षण कम उम्र के लड़के-लड़कियों को जेंडर-संवेदनशीलता के प्रति प्रोत्साहित करने का एक ज़रिया होता है. किशोर शिक्षण कार्यक्रम के इस पहलू को ज़रूर लागू किया जाना चाहिए.

असंगठित क्षेत्र को सम्मिलित करने के लिए सामाजिक सुरक्षा नियमन विकसित किया जाए:

देखभाल वाली भूमिका अदा करने वाली स्त्रियों व अन्य नाजुक समूहों समेत महिलाओं पर ख़ास ध्यान दिया जाए, पतियों या परिवारों पर महिलाओं की निर्भरता समाप्त करने के लिए उनमें आजीविका कमाने की क्षमता विकसित की जाए और उन्हें अलग से राष्ट्रीय ग्रामीण रोज़गार गारंटी परियोजना के तहत कार्ड जारी किए जाएँ.

मौजूदा नीतियों का समग्र क्रियान्वयन सुनिश्चित किया जाए, तथा क्रियान्वयन प्राधिकरणों को संवेदनशील बनाया जाए और कोताही बरतने वालों को दंडित किया जाए:

राज्यों की सरकार मेडिकल एसोसिएशनों तथा काउंसिलों के साथ तालमेल कर सकती हैं ताकि स्थानीय मेडिकल पेशेवरों के साथ सकारात्मक संबंध स्थापित हो सके. डॉक्टरों, न्यायिक अधिकारियों व स्थानीय समुदायों को पीसी-पीएनडीटी अधिनियम के प्रति संवेदनशील बनाया जाए. शिक्षा, श्रोज़गार, स्वास्थ्य तथा एचआईवी निरोध जैसी अन्य सार्वजनिक पहलों के साथ बाल-विवाह निरोध को जोड़ा जाए. सांसदों को चाहिए कि वे बाल विवाह के नकारात्मक प्रभावों तथा महिलाओं और बाल-कन्या अधिकारों पर चलने वाले सार्वजनिक शिक्षण कार्यक्रमों में सहयोग करें, तथ इस मुद्दे पर समदुायों को एकजुट करने वाले नागर समाज समूहों के क्षमता-निर्माण की युक्ति इज़ाद करें. सरकार क़ानूनी अधिकारों के प्रति जागरूकता फैलाए तथा जहां ज़रूरी हो वहां क़ानूनी सहायता भी उपलब्ध कराए.

महिलाओं के स्वास्थ्य और पोषाहारों की स्थिति में सुधार के लिए निरोधक क़दम उठाएँ:

दाइयों व आशाओं को मुख्यधारा की स्वास्थ्य प्रणाली के साथ जोड़ा जा सकता है और उन्हें इस तरह का प्रशिक्षण भी दिया जा सकता है कि वे गर्भधारण के दौरान लौह-सम्पूरक तत्वों व आहार के वितरण, तथा प्रसव पूर्व व उपरान्त देखभाल जैसे ज़रूरी काम कर सकें. एक सुरक्षित, और भेदभावरहित माहौल में महिलाओं को सेक्शुअॅल व जनन संबंधी स्वास्थ्य की व्यापक ज़रूरतों के मद्देनज़र समुचित जानकारी और सुविधा प्रदान की जाए. इसके लिए ज़रूरी है कि अच्छी परिवार नियोजन सुविधाएं उपलब्ध हों, दम्पत्तियों को समुचित परामर्श मिले तथा अवांछित गर्भधारण पर रोक लगायी जाए. यह भी ज़रूरी है कि गर्भधारण के दौरान व प्रसवोपरान्त सुरक्षित मातृत्व के लिए ज़रूरी सुविधाएं उपलब्ध हों, शिशुओं की देखभाल के बेहतर उपाय हों, तथा गर्भनिरोधक दवाओं की नियमित आपूर्ति में कोई रुकावट न आए.

राष्ट्रीय ग्रामीण रोज़गार गारंटी योजना, राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन जैसे मौजूदा कार्यक्रमों को जेंडर-संवेदी बनाया जाए:

जेंडर दृष्टिकोण से मौजूदा क़ानूनों की निरंतर समीक्षा की जाए, तथा विभिन्न मंत्रालयों में क्षमता-निर्माण के लिए बजट का पुनर्मूल्यांकन किया जाए और उसे बढ़ाया जाए. मंत्रालयों के अंदर सबसे प्रभावी लक्ष्यीकरण के लिए लैंगिक आंकड़े को अलग-अलग करने का प्रावधान किया जाए.

महिला आरक्षण बिल सर्वाधिक प्राथमिकता के साथ पारित किया जाए.

लक्ष्य 4: बाल मृत्यु में कमी

लक्ष्य: 1990 स 2015 के बीच 5 वर्ष से कम उम्र के बाल-मृत्यु दर में दो तिहाई की कमी.

भारत में शिशु मृत्यु दर 58 प्रति हज़ार है, यानी **हर एक हज़ार जन्म पर 58 मौतें.** श्रीलंका में यह दर 11 प्रति हज़ार है जबकि बांग्लादेश में 52.5 प्रति हज़ार. ज़ाहिर है यह बेहद गंभीर मसला है. विकसित देशों में यह दर प्रति हज़ार पांच मौतों के आसपास है. (ब्रिटेन के आंकड़े से)

भारत में पैदा होने वाले हर दस बच्चे में से एक 5 साल की उम्र तक भी नहीं पहुंच पाता है. दुनिया भर में जन्म के तुरंत बाद (जन्म के 28 दिनों तक) मर जाने वाले बच्चों की सबसे बड़ी तादाद भारत में है.

50 प्रतिशत बाल-मृत्यु की वजह कुपोषण है. 1990 के दशक के आखिर से अल्प-पोषण के शिकार बच्चों के अनुपात मे कोई ख़ास बदलाव नहीं हुआ. दरअसल, बच्चों में रक्तक्षीणता के मामले बढ़े हैं (राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण-3).

हर चार गर्भवती महिला में से एक की एक बार भी प्रसवपूर्व जांच नहीं होती है, और ज़्यादातर प्रसव बिना किसी स्वास्थकर्मी की मदद से संपन्न होता है (राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण). वर्तमान में एक तिहाई संभावित माताओं को टिटनेस (धनुष-टंकार) के ख़तरों से बचने के लिए लगाए जाने वाले निरोधी टीके नहीं लगते हैं जो जन्म के दौरान माता और शिशु दोनों के स्वास्थ्य के लिए ज़रूरी होता है.

भारत का शिशु टीकाकरण की दर दक्षिण एशिया में सबसे कम है. भारत में बीसीजी का टीका न लगे बच्चों का अनुपात नेपाल की तुलना में दोगुना, बांग्लादेश के मुक़ाबले 5 गुना और श्रीलंका की अपेक्षा तो बीस गुना ज़्यादा है. अनुसूचित जनजाति के वर्ग के बच्चों में टीकाकरण का संयोग तो मात्र 26 प्रतिशत है.

	बंग्लादेश	भुटान	भारत	नेपाल	पाकिस्तान	श्रीलंका
टीकाकरण 3 वर्ष से कम उम्र के बच्चों का प्रतिशत जिन्हें बीसीजी, डीपीटी3, एमसीवी, पोल3 की खुराक नहीं मिली है						
अल्पपोषाहर से पीड़ित बच्चों का प्रतिशत	14.5	10.5	**34.25**	20.5	30.75	2.75
कम वज़न	**48**	19	47	**48**	38	29
अवरोधित (प्रतिशत)	43	40	46	**51**	37	14
अपविष्ट (प्रतिशत)	13	3	**16**	10	13	14
शिशु मृत्यु दर (प्रति हजार जन्म)	52.5	45	55	53.9	**67.5**	11

स्त्रोतः यूनिसेफ (2006) 'विश्व में शिशुओं की स्थिति' और संयु. राष्ट विकास कार्यक्रम. प्रत्येक लाईन में कमियाँ रेखांकित.

मौजूदा नीति

दसवीं और ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना	2007 तक बाल मृत्यु दर घटा कर 45 और 2012 तक 28 करना. बच्चों में कुपोषण घटाने तथा नवयुतियों में व्याप्त रक्तक्षीणता और कुपोषण पर अंकुश लगाने के लिए रणनीति.
न्यूतमन साझा कार्यक्रम	ब्च्चों के लिए पोषाहार कार्यक्रम, विशेषकर बालिकाओं के लिए चलने वाले पोषाहार कार्यक्रमों का व्यापरीकरण.
प्रजनन और बाल स्वास्थ्य कार्यक्रम	प्रसव पूर्व होने वाली बिमारियों के साथ-साथ बालपन में होने वाली बिमारियों के संघटित प्रबंधन, माताओं की शिक्षा, निरोधक बिमारियों और संक्रमणों से होने वाली मौतों, सर्व टीकाकरण अभियान इत्यादि पर विचार करता है.

समाकेतिक बाल विकास शृंखला (आइसीडीएस)	ठसके तहत 3 लाख प्रशिक्षित सामुदायिक आंगनवाड़ी-कर्मियों, सहयोगियों तथ सामुदायिक/महिला समूहों की मदद से छाटे-छोटे बच्चों, गर्भवती महिलाओं व धायों तथा महिला समुहों के बीच काम किया जा रहा है. वितरण केंद्रों के ज़रिए छह वर्ष से कम उम्र के बच्चों, किशोरियों, गर्भवती महिलाओं तथा धायों को निर्धारित कैलॉरी वाला भोजन दिया जाता है, और ऐसा करते वक्त कुपोषित बच्चों के लिए प्रोटीन का विशेष ख्याल रखा जाता है. दिसम्बर 2007 के अंत तक 5959 आइसीडीए कार्यक्रमों से 629 लाख बच्चों तथा 132 लाख गर्भवती महिलाओं व दुग्धपान कराने वाली माताओं को लाभ मिला. आंगनवाड़ी केंद्रों की संख्या मार्च 2004 में जहां, 7 लाख 58 हज़ार थी वहीं 2007 में बढ़कर यह 15 लाख हो गयी.

नीति अनुशंसा

बच्चों के लिए बजटीय आवंटन बढ़ाया जाए.

छह वर्ष से कम उम्र के बच्चों पर मौजूदा केन्द्रीय बजट का लगभग 1 प्रतिशत हिस्सा ही ख़र्च किया जाता है यानी अब भी सरकार इसको पर्याप्त वरीयता नहीं दे रही है. अब भी आंगनबाड़ी या आंगनबाड़ी-कर्मियों की संख्या बेहद सीमित है. समय और स्थान के लिहाज से लोगों तक इसकी पहुंच भी सीमित है, तथा जिन्हें इनकी सेवा का जरूरत है उनकी पौष्टिक जरूरतों को पूरा करने लायक़ पर्याप्त संसाधन इनके पास है भी नहीं. अगर प्रति 1000 की जनसंख्या पर एक आंगनबाड़ी की घोषणा के आधार पर देखा जाए तो 14 लाख आंगनबाड़ियों की ज़रूरत होगी, जबकि हक़ीक़त ये है कि कार्यरत् आंगनबाड़ियों की मौजूदा संख्या अनुमानत: 9 लाख ही है. सरकार को चाहिए कि एक अतिरिक्त आंगनबाड़ी कर्मी की बहाली के मद्देनजर वह और संसाधन जारी करे. योजना आयोग के एक रिपोर्ट के मुताबिक़ प्रति आंगनबाड़ी एक कर्मचारी के हिसाब से अतिरिक्त नियुक्ति में मात्र 1000 करोड़ रुपए सालाना का ख़र्च आएगा. 14 लाख आंगनबाड़ियों में मौजूदा तनख़्वाह से दुने के हिसाब से भी कुल ख़र्च बैठेगा मात्र 3360 करोड़ (गुप्ता, 2007);

सामाजिक सुरक्षा में सुधार:

देश के ज़्यादातर हिस्सों में गरीबी रेखा से नीचे की गर्भवती महलाओं को मौजूदा राष्ट्रीय मातृत्व लाभ परियोजना का फ़ायदा नहीं मिल पाता है, जिसके चलते असंगठित क्षेत्र में बहुत-सी ग़रीब महिलाएँ मातृत्व संबंधी हक़ों से वंचित रह जाती हैं और अपने बच्चों की देखभाल पर संसाधन और समय नहीं व्यतीत कर पाती है. मौजूदा नियमन और मातृत्व लाभ परियोजना की समीक्षा करने और उन पर सुझाव पेश करने के लिए एक टास्कफ़ोर्स का गठन किया जाए, कोष उपलब्ध कराया जाए ताकि तमाम अनौपचारिक काम संपन्न हो सके तथा राष्ट्रीय मातृत्व लाभ परियोजना में सुधार किया जाए ताकि जिन महिलाओं को अन्य परियोजनाओं का लाभ नहीं मिल पाया उन्हें इसमें शामिल किया जा सके.

मतृत्व-शिक्षा:

हालिया अध्ययनों से यह पता चलता है कि जन्म के एक घंटे के अंदर स्तनपान कराने से नवजात-मृत्यु की संभावना एक तिहाई कम हो जाती है. आशा, एएनएम व आंगनबाड़ी कर्मचारियों को चाहिए कि वे माताओं को शिक्षित बनाएँ, उनको परामर्श दें तथा प्रसवपूर्व तथा प्रसवोपरांत उनकी सहायता करें. नवजात तथा छोटे बच्चों के संभरण लक्ष्य को पूरा करने पर आशाकर्मियों को फिलवक़्त कोई अतिरिक्त प्रोत्साहन नहीं दिया जाता है.

टीकाकरण के दायरे को विस्तृत किया जाए:

एक अमेरिकी स्वास्थ्य संगठन ने एक त्री-स्तरीय रणनीति की अनुशंसा की है (1) एक से चौदह साल के बच्चों को ध्यान में रखकर एक राष्ट्रव्यापी अभियान, (2) नवजात शिशुओं का नियमित टीकाकरण, तथा (3) एक से चार वर्षीय बच्चों को ध्यान में रखते हुए चाहे उनके पिछले टीकाकरण की स्थिति जो भी रही हो - हर चाल साल पर एक व्यापक जनअभियान. इसको 'शुरू करो, जारी रखो और अनुवर्तन करो' के रूप में जाना जाता है. हर राज्य में एक निगरानी परियोजना आरंभ की जाए ताकि रुटीनी टीकाकरण की प्रगति पर नजर रखी जा सके और यह पता लगाया जा सके कि समाज के किन क्षेत्रों को अब तक इसका लाभ नहीं मिल पा रहा है.

कुपोषण को लक्षित किया जाए :

समाकेतिक बाल विकास परियोजना तथा राष्ट्रीय स्वास्थ्य मिशन को मिलाकर एक बेहतर परियोजना बनायी जाए ताकि कुपोषण से निबटा जा सके. जिन क्षेत्रों में कुपोषण ज़्यादा है वहां स्वास्थ्य केन्द्रों पर ही पोषाहार पुनर्वास केन्द्रों की स्थापना की जाए और इसे टीकाकरण के समकक्ष माना जाए, समाकेतिक बाल विकास परियोजना द्वारा उपलब्ध कराए जाने वाले भोजन में दाल, सब्ज़ी, दूध, अंडे इत्यादि आवश्यक तत्वों का संतुलन हो ताकि पोषाहार की कमी से निबटा जा सके. स्कूल-पूर्व की शिक्षा में फिर से जान डालने की ज़रूरत है ताकि दोपहर के भोजन की तरह ही बच्चों को पोषाहार और स्वास्थ्य सेवाएँ उपलब्ध हो पाएँ.

लक्ष्य 5 : मातृ-स्वास्थ्य में सुधार

लक्ष्य : 1990 से 2015 के बीच मातृ मृत्यु दर में तीन चौथाई कमी लाना.

विश्व स्वास्थ्य संगठन, युनिसेफ, युएनएफ़पीए तथा विश्व बैंक के अनुमान के मुताबिक भारत में मातृ मृत्यु दर प्रति 1 लाख जन्म पर 450 है (2003). भारत में माताओं की होने वाली मौतों की संख्या दुनिया में सबसे ज़्यादा है. संयुक्त राष्ट्र एजेसियों की रिपोर्ट के मुताबिक़ अमेरिका के मुकाबले भारत में माताओं की मृत्यु की दर 41 गुना ज़्यादा है जबकि चीन की अपेक्षा 10 गुना.

भारत में **स्वास्थ्य सेवाओं पर सकल घरेलू उत्पाद के एक प्रतिशत से थोड़ा ही ज़्यादा** ख़र्च किया जाता है जो सालाना प्रति व्यक्ति 6.39 डॉलर के आसपास बैठता है. वृहद अर्थशास्त्र और स्वास्थ्य पर एक आयोग के मुताबिक़ विकासशील देशों में ज़रूरी स्वास्थ्य सेवाओं पर प्रति व्यक्ति ख़र्च कम से कम 30-40 डॉलर सालाना होनी चाहिए.

कर्ज में डूबे या मजबूरन अपनी संपत्ति बेच चुके परिवारों में से तक़रीबन आधे को ऐसा अस्पताल का ख़र्च चुकता करने के लिए करना पड़ा. ग्रामीण क्षेत्रों में मात्र 39 प्रतिशत जन्म पेशेवर स्वास्थ्यकर्मियों की देखरेख में संपन्न होता है (2005-06). 2008 के विश्व स्वास्थ्य संगठन के एक रिपोर्ट के मुताबिक गरीबों की तुलना में अमीर समुह तीन गुना ज़्यादा स्वास्थ्य सुविधाएं हासिल कर पाने की हैसियत रखते हैं.

भारत में ग्रामीण स्वास्थ्य सांख्यिकी पर 2006 के एक बुलेटिन के मुताबिक यहाँ 2001 के जनसंख्या नियामक के अनुसार 20,903 उपकेन्द्रों 4803 स्वास्थ्य केन्द्रों तथा 2653 सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्रों की कमी है. हर 6000 लोगों पर मात्र एक बिस्तर का हिसाब बैठता है.

बड़ी संख्या में दंपत्तियों का ये कहना है कि उनकी गर्भनिरोधक ज़रूरतें पूरी नहीं हो पाती हैं, देर से बच्चा चाहने वालों या बच्चों के जन्म में अंतराल चाहने वालों में से केवल 30 प्रतिशत ही सफल हो पाते हैं, इस कमी के चलते बड़ी संख्या में असुरक्षित गर्भपात होता है (कुल मातृ-मृत्यु का लगभग 8 प्रतिशत).

मौजूदा नीति

दसवीं और ग्यारहवीं योजना	2007 के मातृ मृत्यु दर 200/100000 को घटाकर 2012 तक 100 करना. किशोरियों को संकेंद्रित करते हुए रक्तक्षीणता और कुपोषण के मामलों में कमी लाना.
न्यूनतम साझा कार्यक्रम	स्वास्थ्य सेवाओं पर होने वाले ख़र्च को बढ़ाकर सकल घरेलू उत्पाद का कम से कम 2-3 प्रतिशत करने और प्राथमिक स्वास्थ्य पर विशेष ध्यान देने लिए प्रतिबद्ध.
राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन	मातृ-मृत्यु दर को घटाकर 100 करना तथा कुल जनन दर का अनुपात घटाकर 2:1 करना, महिलाओं के लिए नक़द प्रोत्साहन वाली जनानी सुरक्षा योजना के तहत संस्थानों में प्रसव की सुविधाओं को बढ़ाना. प्रजनन एवं बाल स्वास्थ्य कार्यक्रम (आरसीएच-2) के तहत ग्रामीण क्षेत्रों और झुग्गी-झोपड़ियों में रहने वाली महिलाओं के लिए पेशेवर सुविधाओं का प्रावधान तथा आपातकालीन प्रासविकी सुविधा की व्यवस्था. 3 लाख 20 हज़ार सहायक सामाजिक स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं की नियुक्ति की गयी और 2 लाख से ज़्यादा कार्यकर्ताओं को अनुकूलन प्रशिक्षण दिया गया.

नीति अनुशंसा

एक ऐसी व्यावहारिक रणनीति विकसित की जाए जिसमें स्वास्थ्य सेवाओं की दीर्घकालीन ज़रूरतों और निरोधकों पर विचार हो:

स्वास्थ्य की देखरेख के लिए जो भी व्यावहारिक दृष्टिकोण विकसित हो उसमें पोषाहार, साफ़-सफ़ाई, पेय-जल, आवास, परिवहन, शिक्षा, रोज़गार तथा जेंडर पर विचार किया जाए. इसका तात्पर्य यह हुआ कि राजनीतिक फ़ोकस का पुनरीक्षण, जिसमें केवल जनानी सुरक्षा योजना के तहत आपातकालिन प्रासविक सुविधा ही नहीं बल्कि सरकार देश भर में स्वास्थ्य सुविधाओं की बेहतरी के लिए प्रतिबद्धता दिखाए.

स्वास्थ्य-सुविधाओं के क्षेत्र में निवेश में वृद्धि:

मातृ-मृत्यु को घटाने के लिए बनने नीतियाँ हो या कार्यक्रम, सभी स्वास्थ्य सुविधाओं तथा ज़रूरी ढांचागत सुविधाओं में सकल घरेलू उत्पाद के कम से कम 2-3 प्रतिशत निवेश पर टिका है, यानी स्वास्थ्य सेवाओं के लिए समर्पित कर्मी और उनके सम्मानजनक वेतन, अंकेक्षण और निगरानी की ठीकठाक स्थापित पद्धति तथा बेहद उम्दा राजनीतिक संवांद के लिए कम से कम इतने पैसे की व्यवस्था की जाए. 2008-09 के बजट में सरकार ने स्वास्थ्य सेवाओं पर होने वाले खर्च को एक प्रतिशत से थोड़ा ज़्यादा बढ़ाने का वायदा किया है, यानी सालाना प्रति व्यक्ति 6.39 डॉलर के आसपास. श्रीलंका में यह खर्च प्रति व्यक्ति (पीपीपी) 15.57 डॉलर के आसपास बैठता है जबकि मलेशिया में तक़रीबन 78.42 डॉलर. स्वास्थ्य सेवाओं पर कम सरकारी ख़र्च ग्रमीण भारत के क़र्ज़ में डूबने का दूसरा सबसे बड़ा कारण है और उस पर भी यह राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन उपयोग शुल्क में बढ़ोतरी को बढ़ावा देता है. उपयोग शुल्क के कारण न केवल सार्वजनिक सुविधाओं के उपयोग में कमी आयी है बल्कि यह पद्धति भी अपने आप में अपर्याप्त है. अब तक केवल दो राज्य ही अस्पताल के संचालन में होने वाले कुल ख़र्च का 3 प्रतिशत उपयोग शुक्ल के ज़रिए निकाल पाए है.

सुनिश्चित किया जाए कि राष्ट्रीय नीति में स्वास्थ्य को मौलिक अधिकार का दर्जा प्राप्त हो पाए:

वित्त मंत्रालय ने निजी अस्पतालों के प्रोत्साहन के लिए 5 साल तक के कर शून्य का प्रस्ताव रखा है. किसी भी तरह की निगरानी के अभाव में स्वास्थ्य सेवाओं के बढ़ते निजीकरण के कारण कई विसंगतियाँ उत्पन्न हुई हैं. सेवा मुहैया करने में ज़्यादा विशिष्टता की बात हो या फिर ग़रीब रोगियों के इलाज से इंकार करने का, इलाज-प्रक्रिया को महंगा करने की बात हो या अनावश्यक ऑपरेशन और ज़्यादा दवाइयों के इस्तेमाल क: विसंगतियाँ बढ़ती ही जा रही हैं. चाहे जो कर लिया जाए निजी और सरकारी साझेदारी पर्याप्त सरकारी निवेश का विकल्प नहीं बन सकती है. अंतत: हरेक नागरिक को उपयुक्त स्वास्थ्य सेवा मुहैया कराना सरकार की ही जिम्मेदारी होनी चाहिए.

उत्तरदायित्व प्रणाली को संवर्द्धित किया जाए:

नियमित रूप से जिला स्तर पर मातृ-मृत्यु का अंकेक्षण किया जाना जरूरी है. रोगियों को इलाज से इंकार करने पर या फिर अनदेखी और हेराफेरी करने की स्थिति में ऐसा करने वालों की जवाबदेही तय होनी चाहिए.

स्वास्थ्य सेवाओं की मांग और निगरानी में महिलाओं और सामुदायिक सदस्यों की सहभागिता बढ़ने से एक बराबरी वाला, स्थानीयता केन्द्रित रूपरेखा विकसित करने में मदद मिलेगी, सार्वजनिक तौर पर उपलब्ध स्वास्थ्य सेवाओं के प्रभाव मूल्यांकन और लोकतांत्रिक ढंग से चुने हुए स्थानीय स्वास्थ्य काउंसिलों के जरिए उत्तरदायित्व को बढ़ाया जा सकता है.

स्वास्थ्यकर्मियों का क्षमता निर्माण:

प्रत्येक डॉक्टर/स्वास्थ्यकर्मी को कुछ साल के लिए ग्रामीण इलाकों में पदस्थापित किया जाए या फिर सार्वजनिक सेवा के तहत सेवा अवधि का एक निश्चित समय उनके प्रशिक्षण के मूल्यांकन के लिए तय किया जाए. दाइयों और एएनएमों के कौशल और क्षमता को संवर्द्धित किया जाए. इतना ही नहीं मेडिकल संस्थानें के कामकाज के लक्ष्य भी तय किए जाएँ या यों कहा जाए कि स्वास्थ्य सेवाओं को गर्भधारण से लेकर प्रसव और नवजात शिशु की देखरेख तक एक निरंतरता से जोड़ा जाए. यह भी सुनिश्चित किया जाए कि हरेक समुदाय के लिए अनचाहे गर्भ से बचने के विभिन्न उपाय उपलब्ध हो और सुरक्षित गर्भपात सुनिश्चित हो सके.

बाल विवाह निरोधक अधिनियम 1976 का सख्ती से पालन किया जाए:

कम उम्र के बेहद जोखिम भरे गर्भधारण को कम करना अत्यंत जरूरी है. ऐसा करने के लिए सरकार को लड़कियों की शिक्षा पर ध्यान देना चाहिए. उन्हें इस क़दर सशक्त बनाया जाना चाहिए कि समाज में मौजूद विमर्शों/विसंगतियों से वे चुनौती ले सकें तथा अपने अधिकारों और हक़ों के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकें.

लक्ष्य 6 : एचआईवी/मलेरिया व अन्य बिमारियों की रोकथाम

लक्ष्य 1 : 2015 तक एचआइवी/एड्स के प्रसार पर रोक और उसकी गति को कुंद करना.

लक्ष्य 2 : मैलेरिया तथा अन्य गंभीर बिमारियों के संक्रमण पर रोक और उसकी गति को कुंद करना.

राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण संगठन (नाको) के एक अनुमान के मुताबिक भारत में एचआइवी से संक्रमित लोगों की तादाद कम से कम 25 लाख है (2006). भेदभाव और कलंक के भय से बहुत से लोग एचआइवी की जाँच करवाने से हिचकते हैं, वर्ना असल तस्वीर तो कुछ और ही होती. ऐसा कोई संकेत नहीं मिल रहा जो यह बताए कि एचआइवी ग्रस्तता की दर में कोई कमी आ रही हो.

भारत में एचआइवी के प्रसार का मुख्य कारण असुरक्षित यौन संबंध है, बताया जाता है कि आधे से अधिक नए एचआइवी ग्रस्त लोग 15-29 वर्ष के हैं.

राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण 3 से यह संकेत मिलता है कि कुल ग्रामीण भारतीय महिलाओं में से मात्र 50 प्रतिशत ने एड्स के बारे में सुना है. आबादी के सबसे गरीब, पांचवे हिस्स में से केवल 9 प्रतिशत महिलाओं को ही पता है कि कंडोम से संक्रमण रोका जा सकता है.

2006 के **एनसीएइआर** के एक अध्ययन के मुताबिक़ भारत में एचआईवी ग्रस्त एक चौथाई लोगों को उनकी एचआईवी धनात्मक स्थिति के कारण इलाज से इंकार कर दिया जाता है.

ऐसा अनुमान है कि प्रति वर्ष एचआइवी ग्रस्त माताओं की कोख से 55 से 60 हज़ार बच्चे पैदा हो रहे हैं. बिना किसी प्रभवी प्रयास के संक्रमित मां से बच्चे में संक्रमण का खतरा 15 से 25 प्रतिशत बढ़ जाता है.

2006 में मलेरिया के 16.7 लाख मामले प्रकाश में आए, यानी लगभग हर 630 व्यक्तियों में एक मलेरियाग्रस्त.

भारत में हर वर्ष टीबी के 18 लाख मामले सामने आते हैं, जो दुनिया भर में टीबी के कुल नए मामलों का पांचवाँ हिस्सा है और दक्षिण-पूर्व एशिया क्षेत्र में दो तिहाई.

2007 में भारत में पोलियो के मामलों में बड़ी भयानक बढ़ोतरी हुई, 2005 से 66 की अपेक्षा 873 पुष्ट मामले (विश्व स्वास्थ्य संगठन का आंकड़ा). भारत पाकिस्तान, नाइजीरिया, अफ़गानिस्तान समेत उन चार देशों में शामिल है जहाँ आज भी पोलियो एक स्थानिक रोग है.

एचआईवी/एड्स

मौजूदा नीति

राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण कार्यक्रम	2008-09 के बजट में 933 करोड़ रुपए का आबंटन राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण संगठन और राज्य एड्स नियंत्रण संगठन साथ मिलकर तकरीबन 900 स्वैच्छिक संस्थाओं को सहयोग प्रदान करती है ताकि बेहद जोखिम भरे समूहों को केन्द्र में रखकर लक्षित हस्तक्षेप किया जा सके. एक अनुमान के मुताबिक परामर्श और जांच केन्द्रों की संख्या 2004 में 982 की अपेक्षा 2007 में बढ़कर 4132 हो गयी है. सुरक्षित रक्त अंतरण सुनिश्चित करने के लिए 1230 से भी ज़्यादा ब्लडबैंकों का आधुनिकीकरण किया गया है, और मुफ़्त में या फिर सामाजिक विक्रय योजनाओं के द्वारा लगभग 18,500 लाख कंडोम वितरित किए गए. सरकार 15 राजयों में माँ से बच्चों में संक्रमण की रोकथाम के लिए कार्यरत् 307 केन्द्रों के माध्यम से (गोपनीय जाँच व परामर्श समेत) विस्तृत सेवा प्रदन करने के साथ-साथ एआरवी और जन्म के बाद की देखरेख की सुविधा भी उपलब्ध करा रही है ताकि स्तनपान के जरिए

संक्रमण के जोखिम को कम किया जा सके. विश्व स्वास्थ्य संगठन के मुताबिक 3 प्रशित से भी कम महिलाओं को वह इलाज मिल पाता है जिसके ज़रिए उनके बच्चों में संक्रमण को रोका जा सके. जहाँ यह इलाज उपलब्ध होता है वहाँ एचआईवी एड्स से जुड़े कलंक के चलते महिलाएँ प्राय: इसकी माँग नहीं करती है.

2008 में अनुपात: वैसे 3000 लोगों को दूसरे चरण का एन्टीरेट्रोवायरल इलाज शुरू किया गया जो प्रथम स्तरीय इलाज के प्रतिरोधक हो गये थे या जिन पर प्रथम स्तर का इलाज बेअसर होने लगा था. 2006 के अंत तक मात्र 95000 लोगों (जरूरतमंदों का मात्र 15 प्रतिशत) को एचएएआरटी मिल पा रहा था, **एचएएआरटी** एक इस तरह की इलाज-प्रक्रिया है जिसमें एन्टीरेट्रोवायरलों के जरिए एड्स के विकास को धीमा किया जाता है. नाको के मुताबिक दूसरे स्तर का इलाज जरूरतमंदों के बेहद छोटे तबक़े को ही मिल पाता है.

भारत में एचआईवी/एड्स ग्रसित लोगों के साथ होने वाले दुर्व्यवहार से सुरक्षा के लिए कोई क़ानून नहीं है प्रस्तावित एचआईवी/एड्स बिल उत्तराधिकार और संपत्ति के अधिकारों के मामले में सुरक्षा की बात करता है. साथ ही इसमें स्वास्थ्य शिक्षा और रोज़गार के मामलों में हर तरह के भेदभाव से सुरक्षा प्रदान की गई है. यह बढ़ते कलंक को रोकने के लिए जिले में एक स्वास्थ्य ओमबड्सपर्सन बनाने की भी बात करता है.

नीति अनुशंसा

भारत में सार्वजनिक स्वास्थ्य प्रणाली व आवश्यक दवाइयों की उपलब्धता को बेहतर बनाया जाए:

इस मौलिक निवेश के बग़ैर एचआईवी/एड्स तथा अन्य गंभीर रोगों से लड़ने का कोई भी तरतम दृष्टिकोण प्रभावी नहीं हो पाएगा. (देखें लक्ष्य 5 ओर 8). यह भी ज़रूरी है कि मौजूदा एचआईवी संक्रमितों का सटीक आंकड़ा एकत्र किया जाए. यह इस संक्रमण से जुड़े कलंक को कम करने के लिए एचआईवी/एड्स बिल को पारित और लागू करने के लिए ज़रूरी होगा.

युवाओं में प्राथमिक रोकथाम का संवर्द्धन किया जाए:

स्कूलों के लिए प्रस्तावित मौजूदा आपसी (पीयर) शिक्षण कार्यक्रम तथा किशोर शिक्षण कार्यक्रम युवाओं में प्राथमक रोकथाम के लिए प्रभावी क़दम हो सकते हैं, नीति-निर्धारकों को चाहिए कि स्वास्थ्य के एक गंभीर मुद्दे के तौर पर इसकी न केवल इसकी तरफ़दारी करें बल्कि इसे प्रोत्साहित भी करें. उन 700 लाख युवाओं तक पहुँचना भी ज़रूरी है जो स्कूल से बाहर (हो चुके) हैं, जिन पर सबसे ज़्यादा संकट है और जो भारी जोखिम वाले समूह का प्रतिनिधित्व करते हैं.

जिला और उप जिला स्तर पर उपलब्ध स्वास्थ्य सुविधाओं में माताओं से बच्चों में फैलने वाले संक्रमण की रोकथाम के लिए केन्द्र स्थापित किए जाएँ. सभी क्षेत्रों तथा समुदायों के एक-एक सदस्य तक वीसीटी केन्द्रों की पहुँच लाज़िमी है.

भारतीय दंड संहिता की धारा 377 को खारिज किया जाए:

समलैंगिका के अपपराधिकरण से राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण कार्यक्रमों के ज़रिए बेहद जोखिम वाले समूहों को प्रभावपूर्वक लक्षित किया जा सकता है तथा भारत को अन्य लोकतांत्रिक देशों की क़तार में लाया जा सकता है, जोखिम वाले अन्य समूहों के प्रति दृष्टिकोण पर भी पुनर्विचार किया जा सकता है. मसलन, नसों के ज़रिए नशाख़ोरी करने वालों तथा सेक्सवर्करों पर पुलिसिया कार्रवाई करने या उन्हें दंडित करने के बजाए उन्हें शिक्षित बनाया जा सकता है और उनके साथ मेलजोल बढ़ाया जा सकता है.

एचआईवी/एड्स बिल अविलम्ब सदन में पेश किया जाए:

भेदभाव की समस्या से निबटने में सहयोग के लिए एक के बाद एक सामुदायिक जागरूकता तथा संवेदनशीलता कार्यक्रम आरंभ किए जाएँ, क्योंकि भेदभाव के चलते बहुत से लोग जाँच करवाने से हिचकते हैं, इलाज का प्रश्न तो बाद आता है.

ट्यूबरक्युलोसिस (टीबी)

मौजूदा नीति

पुनरीक्षित राष्ट्रीय टयूबरक्युलोसिस कार्यक्रम (आरएनटीसीपी) सभी 632 जिलों को इस कार्यक्रम में शामिल किया गया है. यह विश्व स्वास्थ्य संगठन के प्रत्यक्ष अवलोकन में किए जाने वाले उपचार (डॉट) की रणनीति को लागू करने वाला दुनिया का सबसे बड़ा और सबजे तेजी से प्रसारित होने वाला कार्यक्रम है, इसके तहत 5 लाख से भी ज़्यादा स्वास्थ्यकर्मियों को प्रशिक्षण दिया गया, टीबीग्रस्त 300 लाख लोगों की जाँच की गयी, 80 लाख से भी ज़्यादा रोगियों का इलाज किया गया, तथा टीबी से होने वाली 14 लाख मौतों को रोका गया.

2007 में मामलों की जाँच की दर 70 प्रतिशत और इलाज की सफलता का दर 86 प्रतिशत रहा, जो स्थापित अन्तर्राष्ट्रीय मानदंड के बेहद क़रीब है.

राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण कार्यक्रम के साथ मिलकर अब 1 अक्टूबर 2008 से जांच में पाए गए टीबी के सभी रोगियों को नि:शुल्क एचआईवी जाँच का अवसर प्रदान किया जाएगा. हालांकि अप्रभावी पर्यवेक्षण तथा कार्यक्रम, सामान्य स्वास्थ्य प्रणाली की कमज़ोरी और केन्द्र व राज्य सरकारों की अपर्याप्त क्षमता के कारण समग्र रोगमुक्ति की दर में गिरावट आई है. टीबी से संबंधित नि:शुल्क जाँच और इलाज कहाँ-कहाँ उपलब्ध है, इसके बारे समुदाय में जागरूकता बढ़ाने के लिए किए जाने वाले कार्यक्रमों की प्रभावोत्पादका सीमित है. हालांकि राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन का जो स्वरूप है, वह अभिसरण और एकीकरण की बात करता है लेकिन स्वास्थ्यकर्मियों की कम संख्या व बार-बार उनका स्थानांतरण तथा सामान्य स्वास्थ्य प्रणाली की अन्य ख़ामियों के चलते इस कार्यक्रम के आगे बड़ी चुनौतियां खड़ी हो जाती हैं, ख़ासकर कुछ राज्यों में तो यह एक बहुत बड़ी समस्या है.

नीति अनुशंसा

कार्यक्रम के लिए वित्त और मानव संसाधन की दीर्घकालीन व्यवस्था सुनिश्चित की जाए: स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय के बजट में इसके लिए पर्याप्त बजट की व्यवस्था हो. राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन में टीबी नियंत्रण को उच्च प्राथमिकता दी जाए और यह सुनिश्चित किया जाए इसके लिए पुरावक्ती स्टाफ़ हो. टीबी पर विशेष रिपोर्टिंग हो, वित्तीय कमी न आए तथा टीबी के इलाज के लिए पर्याप्त दवाइयाँ मिलती रहें.

टीबी-एचआईवी टेक्निकल कार्य दल का गठन किया जाए: नेशनल फ़्रेमवर्क फ़ॉर ज्वायंट टीबी/एचआईवी कोलेबोरेटिव ऐक्टिविटिज़ में जिन साझा गतिविधियो का उल्लेख किया गया है उनके क्रियान्वयन और पैमाने को सुनिश्चित किया जाए.

अन्तर्राष्ट्रीय डॉट्स प्लस कार्यक्रम के क्रियान्वयन की रफ़्तार बढ़ायी जाए.

टीबी-संक्रमण घटाने के लिए सामान्य प्रशासनिक व वातावरण संबंधी उपायों पर अमल किया जाए: इसमें स्वास्थ्यकर्मियों का प्रशिक्षण, बल्गम का तेज़ी से परीक्षण तथा उसकी तत्काल जाँच सुनिश्चित की जाए.

लक्ष्य 7 पर्यावरणीय सातत्य सुनिश्चित करना

लक्ष्य 1: टिकाउ विकास के सिद्धांतों को देश की नीतियों और कार्यक्रमों में शामिल करना तथा पर्यावरणीय संसाधनों की क्षति को रफ़्तारहीन करना.

आज जिस दर से कार्बन डायॉक्साइड का उत्सर्जन हो रहा है उस हिसाब से 2050 तक यह तीनगुणा हो जाएगा. ताज़ा आंकड़ों के हिसाब से भारत दुनिया का सबसे बड़ा ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जक देश है. इस पर जलवायु परिवर्तन के प्रभावों, विशेष कर बाढ़, तूफ़ान, सूखा, भूकंप तथा भू-स्खलन जैसी प्राकृतिक आपदाओं का ख़तरा ख़ास तौर से मंडरा रहा है. संयुक्त राष्ट्र संघ के जैक्युस ड्योफ़ का यह दावा है कि 'भारत को बारिश के दम पर होने वाले 1250 लाख टन के उत्पादन से हाथ धोना पड़ सकता है, जो इसके कुल उत्पादन के 18 प्रतिशत के आसपास बैठता है.'

जैवविविधता की राष्ट्रीय रणीनति तथा कार्य योजना के रिपोर्ट के मुताबिक़ भरत आधे वन, 40 प्रतिशत वनस्पति तथा नमभूमि के एक बड़े अनुपात से हाथ धो चुका है. यहाँ पेड़-पौधों तथा पशुओं की कई सौ प्रजातियों पर समूल नष्ट होने का ख़तरा मंडरा रहा है.

लक्ष्य 2: 2015 तक सतत स्वच्छ पेय जल और मूलभूत साफ़-सफ़ाई पाने वालों का अनुपात घटकर आधा हो जाएगा.

भारत की आबादी विश्व की कुल आबादी का 16 प्रतिशत है जबकि इसके पास कुल स्वच्छ पेयजल का मात्र 4 प्रतिशत ही उपलब्ध है. संयुक्त राष्ट्रसंघ के एक रिपोर्ट के मुताबिक 2050 तक प्रति व्यक्ति पेय जल की उपलब्धता 1000 क्युबिक मीटर के महत्त्वपूर्ण स्तर से भी नीचे चला जाएगा.

20 लाख (लगभग 14 प्रतिशत) समुदायों के लिए मात्र रसायनयुक्त प्रदूषित जल ही उपलब्ध है. यही नहीं ज़्यादातर जलस्रोत बैक्ट्रियाओं के कारण प्रदूषित हैं. तक़रीबन 5 परिवारों में से 4 के पास शौचालय की सुविधा नहीं है, और मात्र 30 प्रतिशत गांवों में जलनिकासी की व्यवस्था है.

मौजूदा नीति

2007-08 के मानव विकास रिपोर्ट के मुताबिक़ 'बढ़ते जलवायु परिवर्तन को अध्यारोपित करने से वृहद मानव विकास के घाटे से समावेशी विकास के लक्ष्य के घालमेल हो जाने का ख़तरा है'

वन अधिकार अधिनियम 2006 को स्वीकृति:

इस अधिनियम में एफ़डीएसटी के अधिकारों को, जिनका दीर्घकालीन आधार पर ज़मीन पर दखल है - स्वीकृति प्रदान करने की बात की गयी है (25 अक्टूबर 1980).

द पंचायत एक्सटेंशन ऑफ़ शिड्युल्ड एरिया (पीइएसए) ऐक्ट, 1996: यह अधिनियम प्राकृतिक संसाधनों के प्रबंधन, तथा इससे संबंधित विकास व नियोजन तथा विवादों के मामलों में ग्राम सभा को विधायी शक्तियां प्रदान करता है.

राष्ट्रीय जैव विविधता रणनीति तथा कार्ययोजना, 2000; जैवविविधता अधिनियम, 2000:

यह अधिनियम जैव सुरक्षा को प्रोत्साहित करता है और जैव-निजता तथा जैव-व्यापार के बढ़ते मामलों के साथ-साथ ही जैवव्यवस्था एवं वन्यप्राणी वास में हो रहे नाटकीय बदलाव को भी संबोधित करता है.

राष्ट्रीय जलवायु कार्ययोजना, 2008:

इस योजना में उत्सर्जन घटाने का काई ठोस लक्ष्य निर्धारित किए बग़ैर अनुकूलन और न्यूनीकरण पर ज़ोर दिया गया है. साथ ही इसमें 'बहुस्तरीय, दीर्घकालीन समावेशी रणनीति' के लिए आठ मिशन की बात की गयी है जिसमें ऊर्जा संरक्षण, कृषि, जलप्रबंधन, सौर-ऊर्जा, हिमालय की जैव-प्रणाली की सुरक्षा तथा 'हरा-भरा हिन्दुस्तान' परियोजना शामिल है. राष्ट्रीय जलवायु कार्ययोजना, 2008 में अनुसंधान और विकास के लिए निजी क्षेत्र के साथ साझेदारी का प्रस्ताव भी रखा गया है ताकि कार्बन सक्षम (पर आधारित) ऊर्जा का सृजन हो सके. इसमें मूल्य निर्धारण एवं नियमन तथा अनुसंधान व विकास के ज़रिए जलोपयोग की क्षमता बढ़ाने पर विचार किया गया है ताकि प्रतिकूल मौसम या अनिश्चित मौनसून का मुक़ाबला किया जा सके.

राष्ट्रीय जैवइंधन नीति:

उम्मीद है कि इसके अंतर्गत इंधन के क्षेत्र में तीव्र विकास की घोषणा की जाएगी ताकि 2012 तक ऊर्जा आपूर्ति में 5 प्रतिशत और 2017 तक 10 प्रतिशत की दर से मिश्रण संभव हो पाए. उम्मीद यह भी है कि इसके तहत ग़ैरखाद्य तेलों के न्यूनतम सहयोग मूल्य, तथा क्षमता-निर्माण, अनुसंधान, विकास, क्रय मूल्य व पंजीकरण से मुताल्लिक विवरणों की भी घोषणा की जाएगी.

नीति अनुशंसा

जलवयु परिवर्तन के न्यूनीकरण के लिए लक्ष्य तथा समयसीमा निर्धारित की जाए:

भारत जैसे विकासशील देशों को चाहिए कि अगले कुछ दशकों में उत्सर्जन को प्रक्षेपित आधारभूमि के आसपास ले जाएँ. विकास को जिस तरह कार्बनोन्मुखी तकनीकी और नमूनों के उपयोग के साथ जोड़कर देखा जा रहा है उसे तत्काल नज़रअंदाज़ करने की कोशिश करनी होगी. इसलिए सरकार को चाहिए कि वह राष्ट्रीय जलवायु कार्ययोजना में समयबद्ध परिमाणात्मक लक्ष्यों को शामिल करे, जिनमें पर्यावरणीय प्रबंधन में सुधार तथा पर्यावरणीय संसाधनों के सातत्य के लिए निवेश की ज़रूरतों को चिह्नित किया जाए. वैसी नीतियां जिनमें कार्बन की वास्तविक या अन्तर्निहित क़ीमत शामिल हों, उत्पादकों तथा उपभोक्ताओं को निर्णय लेते वक़्त पर्यावरणीय कारकों पर विचार करने के लिए प्रोत्साहित करती हैं. मसलन, लंदन शहर ने केन्द्रीय लंदन में ट्रैफिक कम करने के लिए अपने निवासियों से भीड़-भाड़ प्रभार वसूलना शुरू कर दिया है. मुंबई जैसे अत्यंत भीड़-भाड़ वाले शहर के लिए यह व्यवस्था, ख़ास तौर से कारगार हो सकती है. लेकिन ज़रूरत इस बात की है कि सार्वजनिक और ऊर्जा सक्षम परिवहन में निवेश बढ़ाया जाए, बसों और साइकिलों के लिए अलग-अलग लेनों की व्यवस्था हो तथा मेट्रो या/और मोनो रेल व कम उँचाई वाले ठीक-ठाक फुटपाथ की भी व्यवस्था हो.

विशिष्ट राष्ट्रीय अनुकूलन रणनीति:

फ्रांस, इंग्लैंड तथ फिनलैंड में विकसित हुए एक से एक बेहतरीन मिसास हमारे सामने हैं. कृषि अनुसंधान व विस्तारण सेवाओं को सुदढ़ किया जाए. खाद्य और ऊर्जा प्रणाली का विकेन्द्रीकरण हो, तथा राज्य स्तरों पर संभावित ख़तरे वाले क्षेत्रों का नक़्शानबीसी के ज़रिए प्रभावी लक्ष्यीकरण किया जाए.

साफ़-सफ़ाई के बारे में सतत सूचना और शिक्षा प्रदान किया जाए.

कचरा प्रबंधन और प्रदूषण नियंत्रण के प्रभावी नियमों के मद्देनजर मौजूदा नीतियों का क्रियान्वयन तथा विकास योजनाओं पर काम: उद्योगों में सख़्त प्रवर्तन की ज़रूरत है, विशेषकर जल प्रदूषण के आरोपों की दृष्टि से. साथ ही उर्वरकों, कीटनाशकों, कृमिनाशी, विडिसाइट के इस्तेमाल पर समुचित निगरानी की ज़रूरत है क्योंकि इनसे तल और भूजल निकायों में संक्रमण फैलता है.

जैवविविधता और संरक्षण को प्रोत्साहन:

कहीं भी स्थानीय संरक्षण प्रतिबद्धताओं के लिए मानव जीवन को एक पूर्व शर्त माना गया है. ज़ाहिर है इसके लिए एक सुरक्षित और शांत वातावरण की आवश्यकता होती है. इसके लिए ज़रूरी है कि राज्य सरकारें और पंचायती राज संस्थाएं पूरी प्रतिबद्धता के साथ पीइएसए और वन अधिकार अधिनियम को लागू करे. जहाँ कहीं भी जैविक सुरक्षा की ज़रूरत हो वहाँ किसी क़िस्म की व्यावसायिक गतिविधियों पर विशेष रूप से पाबंदी लगा दी जानी चाहिए. वन्यप्राणियों के लिए सुरक्षित क्षेत्रों में संसाधनों पर क़ब्ज़ा करने या ऐसी किसी भी गतिविधि, जिससे उस क्षेत्र के लिए हानि हो सकती हो-पर सख़्त सज़ा का प्रावधान होना चाहिए. विविध फसली चक्र को बढ़ावा देने के लिए वैसी खेती को हतोत्साहित किया जाना चाहिए जिससे लंबे दौर में नुक्शान होता हो, तथा जैव इंधन की किसी भी नीति में खाद्यान्न सुरक्षा को प्राथमिकता दी जानी चाहिए. 'वेस्टलैंड' को स्पष्ट रूप से परिभाषित किया जाना चाहिए ताकि कृषिभूमि, वन तथ आजीविका के लिए ज़रूरी ज़मीन को बायोमास में तब्दील होने से रोका जा सके.

उत्कृष्ठ उदाहरण:

1992 से ब्राजिल के कई राज्यों ने जैविक वैल्यू ऐडेड टैक्स वसूलने शुरू कर दिए हैं, जिससे बड़े संरक्षण वाले क्षेत्रों पर होने वाले अतिरिक्त ख़र्च की भरपाई करने में मदद मिलती है. आइसीएमएम-इ से प्राप्त होने वाले राजस्व का 25 प्रतिशत म्युनिस्पल्टियों को आंबटित किया जाता है, जिसे तय करते वक़्त यह देखा जाता है कि एक निर्धारित पर्यावरणीय समुच्चय में उनका प्रदर्शन कैसा रहा है. बढ़ते हुए राजस्व से जैवपर्यटन के विकास की संभावनाएं भी बढ़ी हैं, जिसके चलते समुदायों और निजी साझेदारों के बीच बढ़ती भागीदारी को प्रोत्साहन भी मिलता है. स्रोत: पर्यावरणीय सातत्य पर संयुक्त राष्ट्रों के टास्कफ़ोर्स से

अभिशासन प्रक्रिया बेहतर बनाया जाए तथा उत्तरदायित्व सुनिश्चित की जाए:

लोगों को यह जानकारी दी जाए कि सूचना के अधिकार अधिनियम, 2005 के तहत उनके हक़ क्या-क्या हैं. 1997 के भारत सरकार की अनुसंशाओं की रोशनी में सभी राज्य सरकारों को चाहिए कि वे स्थानीय निकायों कोज़्यादा से ज़्यादा पारदर्शी और उत्तरदायी बनाएँ. फ़ड प्राप्ति की रसीद तथा ख़र्चे के विवरण समेत विकास परियोजनाओं से जुड़े सभी महत्त्वपूर्ण जानकारियों को सार्वजनिक करके, खाता, लाभार्थियों की पात्रता, पिछले और वर्तमान लाभार्थियों के नाम समेत तमाम प्रासंगिक दस्तावेज़ों/रिकॉर्डों को सार्वजनिक निरीक्षण के लिए उपलब्ध कराके तथा बेहद कम शुल्क पर इन दस्तावेज़ों की प्रतिलिपि जनता के लिए उपलब्ध कराके पारदर्शिता बढ़ायी जा सकती है. पर्यावरणीय प्रबंधन में लगे नौकरशाहों व नीति-निर्धारकों समेत इससे संबंधित निर्णय-प्रक्रिया में शामिल तमाम लोगों को प्रशिक्षित किया जाना चाहिए. सभी परियोजना प्रस्तावों तथा रणनीति-पत्रों में पर्यावरणीय प्रभावों के मूल्यांकन को अवश्य शामिल किया जाए.

लक्ष्य 8: प्रगति के लिए एक वैश्विक साझेदारी का विकास

लक्ष्य 1: नियमों पर आधारित मुक्त व्यापार और वित्तीय प्रणाली जिसके बारे में पूर्वानुमान लगाया जा सके और जो भेदभाव से परे हो ...

अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर .....

1. विकासशील देशों द्वारा किए जाने वाले निर्यात पर उच्च सीमा-शुल्क के चलते 'दान दाता' देशों के पास उनके द्वारा दिए जाने वाले 'सहायता/अनुदान' की अपेक्षा ज़्यादा पैसे जमा हो जाते हैं. इसके बावजूद कि इंग्लैंड का निर्यात बांग्लादेश के मुक़ाबले 17 गुना ज़्यादा है, अमेरिका ने बांग्लादेश से उतना ही सीमा-शुल्क वसूला जितना कि वह इंग्लैंड से वसूलता है. (अंतर्राष्ट्रीय ग़रीबी केन्द्र)

2. कृषि पर अमेरिकी सुरक्षा (30 बिलियन डॉलर मूल्य की) आधिकारिक विकास सहयोग (ओडीए) से तीन गुना ज़्यादा है. ऑक्सफ़ेम का अनुमान है कि 2001 में अमेरिकी रियायत के कारण उप-सहारीय अफ़्रीका को 3010 लाख डॉलर के राजस्व की हानि हुई जो अमेरिका से प्राप्त होने वाले सहयोग के लगभग एक चौथाई के बराबर बैठता है. अमेरिकी रियायत का लगभग तीन चौथाई हिस्सा दस सबसे बड़े कृषि व्यवसायों को मिलता है.

भारत को दोहा के बाद भी विश्व व्यापार संगठन की वार्ता जारी रखने में सहयोग देना चाहिए और कम विकसित देशों के हितों का प्रतिनिधित्व करना चाहिए. सहश्राब्दी विकास के लक्ष्यों को हासिल करने की दिशा में चाहे जैसी भी प्रगति हुई हो, अब तक उसके लिए मोटे तौर पर विकासशील देशों को ही उत्तरदायी ठहराया गया है. लक्ष्य 8 के तहत ज़्यादातर विकसित देशों का उत्तरदायित्व अभी तक लागू नहीं हो पाया है और उत्तरदायित्व पूरा न होने की अवस्था में उनके लिए किसी भी तरह की सज़ा का प्रावधान नहीं है.

क्षेत्रीय स्तर पर ...

1. अन्तर्क्षेत्रीय व्यापार का परिमाण सकल घरेलू उत्पाद के 2 प्रतिशत से भी कम बैठता है, जबकि पूर्वी एशिया में यह 20 प्रतिशत से भी ज़्यादा है. दक्षिण में सीमा के दोनों ओर व्यापार की लागत दुनिया भर में सबसे ज़्यादा है. मौजूदा भारत में केवल 63 प्रतिशत सड़कें ही ठीक-ठाक अवस्था में है (विश्व बैंक). विभिन्न देशों में विभिन्न प्रकार की वर्गीकरण प्रणाली का इस्तेमाल होता है, और सीमा के दोनों तरफ़ के देश अलग-अलग दस्तावेज़ माँगते हैं. विश्व बैंक के मुताबिक़ आवागमन बेहतर होने की स्थिति में व्यापार दोगुना किया जा सकता है.

तेल की क़ीमत जिस प्रकार प्रति बैरल 200 डॉलर के आसपास तक पहुँच चुकी है, उसे देखते हुए भारत में एक कोने से दूसरे कोने तक भोजन पहुँचाना अब व्यावहारिक नहीं लगता. इसलिए पड़ोसी देशों, विशेषकर नेपाल और बांग्लादेश से होकर व्यापार के रास्ते सुनिश्चित करने होंगे और उनमें सुधार करना होगा. मानदंडों को सद्भावपूर्ण बनाना होगा, सीमा पार के संसाधनों के और ज़्यादा प्रभावी प्रबंधन के साथ-साथ लेन-देन की लागत घटानी होगी, परिवहन की कड़ियों को बेहतर बनाना होगा तथा सीमा-शुल्क प्रक्रियाओं को और सामर्थ्यवान बनाना होगा. भारत की इलेक्ट्रॉनिक डेटा इंटरचेंज (इडीआइ) तकनीकी इस प्रणाली को बेहतर और पारदर्शी बनाता है. इसे समूचे भारतीय उपमहाद्वीप में लागू किया जाना चाहिए. भारत और नेपाल तथा अफ़गानिस्तान और पाकिस्तान के बीच जलसंसाधनों के आपसी प्रबंधन से सभी देशों को महत्त्वपूर्ण लाभ मिलेगा. इससे बाढ़ नियंत्रण, पनबिजली तथा सूखे के दौरान जल संवर्द्धन में भी साझेदारी बन सकेगी.

लक्ष्य 2: न्यूनतम विकसित देशों की विशिष्ट ज़रूरतों को संबोधित करना

1. अत्यंत विकसित देशों ने यह वादा किया है कि 2015 तक अपने सकल घरेलू उत्पाद का 0.7 प्रतिशत वे आधिकारित विकास सहयोग पर ख़र्च करेंगे. पर हक़ीक़त ये है कि गिनती के कुछ देश ही अपने लक्ष्य पर कायम हैं. सकल घरेलू उत्पाद के 0.36 प्रतिशत ख़र्च के साथ ब्रिटेन ने आधा सफ़र तय कर लिया है और उधर नाक के नीचे अमेरिका आधिकारिक विकास सहयोग के मद में अब तक अपने सकल घरेलू उत्पाद का केवल 0.16 ही प्रतिशत ही ख़र्च कर पाया है. वादाख़िलाफ़ी करने वाले देशों के लिए किसी तरह के दंड की व्यवस्थ भी नहीं है.

2. 63 सबसे ग़रीब देशों को कुल आधिकारिक विकास सहयोग के आधे से भी कम मिलता है. वर्तमान में अमेरिका प्रति वर्ष इज़रायल को 5 बिलियन डॉलर की मदद देता है जो पूरे अफ़्रीकी महादेश को मिलने वाली अमेरिकी सहायता से भी ज़्यादा है.

न्यायसंगत वैश्विक प्रणाली विकसित करने के लिए ज़रूरी है कि आधिकारिक माध्यमों से आवंटन किया जाए न कि पहले से तय मानदंडों के हिसाब से. संसाधनों का इस्तेमाल देश-दर-देश राष्ट्रीय विकास की रणनीतियों और मानव विकास परिणामों को देखते हुए किया जाना चाहिए, जिसमें राष्ट्रीय बजट के साथ से बेहद क़रीबी सहसंबंधित योजनाओं के साथ-साथ ग़रीबी कम करने की रणनीति पत्रों और रणनीतिक उद्देश्य भी शामिल हों.

लक्ष्य 3: विकासशील देशों की क़र्ज़ की समस्याओं से निबटारे के लिए एक व्यापक योजना बनायी जाए:

केन्या के पास बहुपार्शीय ऋण राहत पाने की योग्यता नहीं है, पर 2006/07 में स्वास्थ्य सुविधाओं की तुलना में ज़्यादा पैसे उसे ऋण-अदायगी पर ख़र्च करने पड़े. बाग्लादेश रोज़ाना 10 करोड़ डॉलर क़र्ज़ अदायगी पर ख़र्च करता है जबकि 5 करोड़ बांग्लादेशी ग़रीबी रेखा से नीचे गुज़रा करते हैं

तथा वहाँ के आधे से ज़्यादा बच्चे कमवज़नी के शिकार हैं.

आखिरकार, अंतरअमेरिकी विकास बैंक (आइएडीबी) इस बात के लिए राज़ी हुआ कि वो पाँच सबसे ग़रीब देशों का उधार माफ़ कर देगा, पर सहायता और सस्ते क़र्ज़ की क़ीमत पर ही. यानी, ऋण माफ़ी से पहले उन देशों की जितनी ख़राब हालत थी अब उसकी तुलना में 50 लाख डॉलर तक की हानि उन्हें सहनी पड़ेगी.

भारत को चाहिए कि वह बहुपार्शीय क़र्ज़ राहत प्रयासों के ज़रिए क़र्ज़ के बोझ तले दबे ग़रीब देशों की मदद करे. साथ ही आधिकारिक विकास सहायता में भी बढ़ोतरी करे ताकि ढांचागत विकास आरंभ हो सके. अंतर्राष्ट्रीय समुदायों को चाहिए कि उन कम विकसित देशों को क़र्ज़ से राहत दिलाने के प्रयास तेज़ करें जहाँ-जहाँ क़र्ज़ के बोझ सहश्राब्दी विकास के लक्ष्यों को हासिल करने की कोशिशों के लिए गंभीर बाधा उत्पन्न कर रहे हैं. जिन देशों को क़र्ज़-माफ़ी मिली है, वहाँ यह सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि जो भी पैसे मिले हैं या आए हैं वह सार्वजनिक सेवाओं पर ख़र्च हो. एक अंतर्राष्ट्रीय निगरानी फ़्रेमवर्क का होना बेहद ज़रूरी है जिसमें निगरानी और मूल्यांकन के पूर्वलेख का स्पष्ट उल्लेख हो, ताकि इसकी निरंतरता पर नज़र रखी जा सके.

लक्ष्य 4: युवाओं के लिए संतोषजनक उत्पादक कार्यों का सृजन ...

दुनिया के हर तीन नौजवान (जिनकी उम्र 15 से 24 वर्ष के बीच है) कामतलाशी से थक चुकने के बाद काम-तलाशी छोड़कर गुज़र-बसर के लिए न्यूनतम मज़रूरी से भी कम पर काम कर रहे हैं (अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन). अकेले एशिया के संदर्भ में भविष्यवाणी की गयी है कि 2015 तक 24.5 करोड़ अतिरिक्त नौजवान काम तलाश रहे होंगे. भारतीय उद्योग परिसंघ के 2006 के एक रिपोर्ट के मुताबिक़ अगले 20 सालों में कुशल/दक्ष कामगारों की माँग बढ़ेगी जबकि ग़ैर-हुनरवान तेज़ी से फ़ुजूल होते जाएंगे.

वर्तमान समय में एक तिहाई से भी कम किशोर स्कूल में हैं, और यदि बच्चे किसी तरह 10 या 12 सालों तक स्कूली शिक्षा पा भी लेते हैं तो उनके लिए उच्च शिक्षा या पेशेवर प्रशिक्षण प्राप्त करने के अवसर बेहद सीमित हैं. उच्च शिक्षा और तकनीकी शिक्षा पर सरकारी रियायत में हुई भारी कटौती से स्थिति और भी ज़्यादा गंभीर हो गयी है. केवल 5 प्रतिशत युवाओं को ही पेशेवर प्रशिक्षण मिल पाया है जबकि इस मामलों में विसित देशों की तस्वीर कुछ और ही है. वहाँ ऐसा प्रशिक्षण पाने वालों में 60 से 80 प्रतिशत की बढ़ोतरी हुई है.

उद्देश्यपरक कार्यों के लिए अभिनव रणनीतियों और ठोस योजनाओं के ब्यौरों से युक्त एक श्वेतपत्र जारी किया जाना चाहिए ताकि अर्थव्यवस्थ को सुचारूपन को बरक़ाररखा जा सके. श्रम-बाज़ार में उतरते नौजवानों की बढ़ती तादाद को बरक़रार रखना आने वाले सालों में एक महत्त्वपूर्ण प्राथमिकता होनी चाहिए. सरकार को चाहिए कि वो आठवीं कक्षा के बाद छात्रों को आजीविका, कौशल तथा पेशागत प्रशिक्षणों समेत तमाम बेहतरीन अवसर उपलब्ध कराए. सरकार स्वयं सहायता समूहों, लचीली व कम अवधि के पेशेवर पाठ्यक्रमों के बारे में भी विचार कर सकती है जिसका पढ़ाई-लिखाई या कमाई की क्षमता को कोई ख़ास लेना-देना न हो. साथ ही विक्रय और उत्पादन तकनीकी से संबंधित शिक्षा, तथा वैसे प्रशिक्षण-सहयोग के बारे में भी सरकार विचार कर सकती है जिससे किसी ख़ास उद्योग में जगह मिलने की संभावना दिखती हो. इस प्रक्रिया में स्वैच्छिक संस्थाओं व नागर समाज की सहायता ली जा सकती है, और मुमकिन है ऐसे कुछ मामलों का तालमेल राष्ट्रीय ग्रामीण रोज़गार गारंटी परियोजना के साथ बिठाया जाए.